International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 04-12-2025, Accepted: 15-01-2026, Published: 03-02-2026
Volume 8, Issue 1, 2026, Page No. 4-10

जौनसार–बावर क्षेत्र का परिचय सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक सन्दर्भ में

डॉ. राजपाल सिंह चौहान
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, डॉ० शिवानन्द नौटियाल राजकीय महाविद्यालय वेदीखाल, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखण्ड, भारत

सारांश
हिमप्रान्तर की आँचलिक लोक संस्कृति में जनजातीय क्षेत्र जौनसार बावर की अपनी एक अलग पहचान है। यद्यपि भौगोलिक और प्रशासनिक दृष्टि से जौनसार–बावर को उत्तरांखण्ड गढ़वाल के गढ़वाल मण्डल का भाग माना जाता है, किन्तु बोली–भाषा, रीति रिवाजों, सामाजिक मान्यताओं और सॉंस्कृतिक, भौगोलिकता के लिए इस क्षेत्र की अलग पहचान है। जौनसार–बावर एक पहाड़ी आदिवासी क्षेत्र है। यहां के लोग स्वयं को पांडवों के वंशज मानते हैं। महाभारतकालीन सभ्यता और संस्कृति की प्रचुरता के साथ ही इस क्षेत्र की साहित्यिक सॉंस्कृतिक पहचान का पराभाव आरम्भ होता है। यमुना नदी के तट पर बसा जौनसार–बावर एक ऐसा क्षेत्र है, जो जौनपुर, रंवाई, हिमाचल प्रदेश की लोक संस्कृति के साथ साम्य स्थापित करता दृष्टिगोचर होता है। जौनसार–बावर की सीमा का निर्धारण करें तो उत्तर में उत्तरकाशी–जनपद का रंवाई व हिमाचल प्रदेश का शिमला क्षेत्र है। दक्षिण में विकासनगर, देहरादून एवं पछवादून क्षेत्र विराजमान है। पूरब में जिला टिहरी गढ़वाल का जौनपुर क्षेत्र तथा पश्चिम में हिमाचल प्रदेश का सिरमौर का क्षेत्र स्थित है। टिहरी गढ़वाल से यमुना नदी और टोंस नदी इसकी सीमा का निर्धारण करती है। इस शोध पत्र में जौनसार बावर के परिचय, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक परिदृश्य का अध्ययन किया गया है।

मूल शब्दः हिमप्रान्तर, सॉंस्कृतिक, जौनसार–बावर

जौनसार–बावर क्षेत्र का परिचय

जौनसार–बावर वह जनजातीय क्षेत्र है, जहां चीड़, देवदार, बांज, बुरॉंस, मोरू के सघन वनों, मखमली घास से चमकते टीलों, सीढ़ीनुमा खेतों में लहराती फसलों एवं अनेकानेक वनस्पतियों से आच्छादित प्रकृति, नाना रूपों से जिसका श्रृंगार करती है, जहां पशुओं के गले में खनकती घण्टियों की संगत संगीत बन जाती है तथा नदियों की कल–कल, झरनों की अनुगूंज मन्द मन्द पवन की स्वर लहरियों में निबद्ध आरोह–अवरोह के मादक स्वर, लोकगीतों का मोहक माधुर्य, लोग नृत्यों का चित्ताकर्षक लास्य लोक वाद्यों का थिरकता उत्कर्ष, लोक कलाओं का लोमहर्षक वैविध्य और लोक संस्कृति की अपरिवर्तनीय मौलिकता इस देव भूमि को रमणीक बनाती है। यमुना नदी जिसका कंठहार, कुलाधिदेव महासू जिसका रक्षक, मेले त्यौहार उत्सव जिसका जीवन यमुना नदी जिसे जौनसार तथा त्यूनी के पास प्रवाहमान पावर नदी जिसे बावर कहते है, इन्हीं दोनों का योग जौनसार–बावर प्रचलित हुआ है। इसलिए जौनसार बावर में चिरपुरातन संस्कृति सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है।

नागाधिराज हिमालय की उपत्यका में रचा–बसा जौनसार बावर अपने नैसर्गिक सौन्दर्य, मौलिक संस्कृति और विशिष्ट सामाजिक धार्मिक, पारम्परिक पहचान के लिए प्रसिद्ध है। महाभारत काल से जुड़ा यह क्षेत्र पांडवों की कर्मभूमि रहा है, एवं महासू देवता यहां का आराध्य देव है यहाँ शैव एवं वैष्णव मतों का यद्यपि समान रूप से आदर होता है, फिर भी महासू देवता मत का प्रबल प्रभाव सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। इतिहास साक्षी है कि यह दुर्गम पिछड़ा पहाड़ी क्षेत्र आदिकाल से राष्ट्र की मुख्य धाराओं से सार्वकालिन सम्बन्ध जोड़कर सदैव कसौटी पर खरा उतरा है। यहां अनेक देशभक्तों ने स्वतंत्रता संग्राम में कूद कर अपने देशप्रेम का परिचय दिया और अनेक शूरवीरों ने अपने देश के लिए अपना प्राणोत्सर्ग कर भारत माता का मस्तक गर्व से ऊँचा किया है।

ऐसे सुन्दर क्षेत्र को कुछ लेखकों, शोधकर्ताओं, पत्रकारों आदि ने लेखन में अमर्यादित होकर लेखनी को अनियंत्रित प्रवाह दिया तथ्यों को तोड़–मरोड़ कर प्रस्तुत करने से इस क्षेत्र के प्रति अनेक भ्राँतियां उत्पन्न कर दी है। हिन्दी में पंक्ति इस प्रकार से है ''जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरति तिन देखी तैसी वाली बात चरितार्थ हुई है। अपने भोलेपन व सरल स्वभाव के लिए विख्यात जौनसार–बावर ने भी समय के साथ परिवर्तन की नूतन करवट ली। शहरी संस्कृति के बीजारोपण से उत्पन्न पादपों को पाश्चात्य हवा के झोंकों का प्रतिकूल स्पर्श रूचिकर लगने लगा, लोग देश काल के संक्रामक प्रभाव से ग्रसित एवं रोजगार शिक्षा व स्वास्थ्य हेतु अपनी लोक संस्कृति से कटने लगे। परिणामस्वरूप पौराणिक लोक कलाएं प्रायः विलुप्त होती जा रही है।

नामकरण–इस क्षेत्र का नाम जौनसार–बावर क्यों पड़ा? इस प्रश्न के उत्तर में विद्वानों ने अपने अलग–अलग मत प्रकट किये हैं– अरब विद्वान अलबरूनी ने ग्यारहवीं शताब्दी में भारत के तत्कालीन निवासियों और विभिन्न विषय से सम्बन्धित हिन्दुओं की मान्यताओं का अपने ग्रन्थ में विस्तृत वर्णन किया है। उन्होंने उत्तराखण्ड के परिश्मी भाग यामुन प्रदेश (जौनसार–बावर) का उल्लेख किया है और उसका सम्बन्ध यवन जाति से जोड़ा है। अथर्वेद के संग्रहकाल में उत्तरांखण्ड के पश्चिम भाग यामुन अंजन का उस वेद में उल्लेख है। यामुन उपत्यका का नाम आज भी जौनसार, जौनपुर जैसे नामों में सुरक्षित है, इन नामों में जौन शब्द का सम्बन्ध यौन–यवन से जोड़ने की अलबरूनी की कल्पना अग्राह्य है। यामुन प्रदेश के साथ काले अंजन के सम्बन्ध की पुष्टि महाभारत के प्रसंगों से भी होती है, जिसमें इस प्रदेश के कालशैल (कालसी), कालकूट (काला पर्वत) का उल्लेख है।' इस प्रकार अरब विद्वान अलबरूनी ने जौनसार–बावर के लोगों को यवन कहकर सम्बोधित करते हुए मत का सत्यापन किया है। अलबरूनी के अनुसार जौनसार बावर के लोग यवन से आकर यहां बस गये है। यही यवन शब्द कालान्तर में यवनसार और फिर जौनसार बन गया। किन्तु अधिकांश विद्वान इस तथ्य से असहमत है। डॉ० शिव प्रसाद डबराल के अनुसार यह पूरा क्षेत्र कुणिन्द राज्य में उस यामुन प्रदेश के नाम से विख्यात था। यामुन प्रदेश जमुना नदी के तट पर स्थित है. यामुन प्रदेश के नाम से विख्यात था। यामुन प्रदेश जमुना नदी के तट पर स्थित है, में गांव के लिए पुर शब्द प्रयुक्त होता था। यमुना पार बसा जौनपुर यह बात सिद्ध करता है कि यामुन पार का क्षेत्र जौनसार

और उस पार का क्षेत्र जौनपुर कहलाया और जौन यमुना का ही अपभ्रंश है।

ऐसी मान्यता है कि जब हिमाचल प्रदेश के लोग टोंस नदी एवं पावर नदी को पार करके जौनसार में प्रवेश करते थे तो कहते थे कि टोंस पार जा रहे हैं टोंस पार कालांतर में अपभ्रंश होकर जौनसार तथा पावर नदी को पार करने पर पावर का अपभ्रंश बावर हो गया जो वर्तमान में जौनसार– बावर के नाम से प्रचलित है ।

वास्तविकता के आधार पर शिव प्रसाद डबराल जी का तर्क ही सही सिद्ध प्रतीत होता है, क्योंकि यामुन प्रदेश मंर स्थित होने के कारण ही जौनसार पड़ा होगा। बावर शब्द जौनसार के साथ इसलिए जुड़ गया, क्योंकि यह पर्वतीय हिमाच्छादित क्षेत्र त्यूनी के पास पावर नदी की सीमारेखा खींचकर इस क्षेत्र को हिमाचल से अलग कर जौनसार में जोड़ती है। इस प्रकार उपरोक्त मतों एवं तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि डॉ० शिव प्रसाद डबराल का मत ही सर्वाधिक उपयुक्त है और इन्हीं तथ्यों के आधार पर इस जनजातीय क्षेत्र का नाम जौनसार–बावर पड़ा होगा।

भारत एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र है, यहां पर अनेक भाषाएं एवं अनेक बोलियां बोली जाती हैं। इसलिए कहा गया है कि "कोस–कोस पर पानी बदले सात कोस पर बानी" बोली भाषा इन नाना स्वरूपों में उत्तर प्रदेश में उत्तराखण्ड में स्थित जनजातीय क्षेत्र जौनसार–बावर अपनी मौलिक संस्कृति की अनमोल विरासत के लिए इतिहास के पन्नों में प्रसिद्ध है। शैवमत के आलोक में पल्लवित पुष्पित और फलित इस देवभूमि की इस देव सस्कृति का सांस में शिव शक्ति की अनुगूंज घड़कती रहती है। समूचा जौनसार–बावर क्षेत्र पाण्डवों की लीला स्थली होने के कारण यहां पांडवों के सखा भगवान श्रीकृष्ण का भी कम महत्व नहीं है। इनके प्रति भी अटूट विश्वास व आस्था यहां के जनजीवन में व्याप्त है। अतः शैव एवं वैष्णव मतों के मतावलम्बी जौनसारी लोग स्वभाव से ही सरल सौम्य व कांन्तिवान छवि केधनी है। कुलाधिदेव महासू यहां के लोक जीवन की संचायिनी शक्ति के संवाहक है। महासू के प्रति अमित–नमित यह पूरा क्षेत्र भक्ति भाव से श्रद्धावनत है। देश, जाति और समाज की वास्तविक पहचान उसकी साहित्य कला और संस्कृति द्वारा होती है। साहित्य कला और संस्कृति के उन्नयन के साथ ही उस समाज का क्रमिक विकास गतिवान होता है।

देहरादून के सुपरिण्टेडेण्ट विलियम्स ने सन् 1874 ई० में अपने ग्रन्थ (मेमॉयर्स ऑफ देहरादून) का प्रकाशन किया। इसमें देहरादून निवासियों तत्कालीन जीवन की एक रोचक झांकी अंकित की है, जो तत्कालिक उत्तराखण्ड निवासियों के जीवन के लिए भी उतनी ही सत्य है, इस ग्रन्थ के एक महत्वपूर्ण अंश में जौनसार–बावर के निवासियों की जीवनचर्या का वर्णन किया है। विस्मृत समृद्धि नामक अध्याय में उत्तराखण्ड के दक्षिण भाग के ऐतिहासिक महत्व के स्थानों एवं उनकी प्राचीन समृद्धि का विस्तृत वर्णन है। कालसी, हरिपुर, जगतराम, शत्रुघन, लाखमाण्डल, सिंहपुर, गंगाद्वार आदि लाखामण्डल प्रशस्ति में यादव नरेशों का उल्लेख मिलता है।

बौद्ध और जौन–परम्पराओं में सोलह जनपदों की जो सूची सुरक्षित है, उसमें यामुन और भारद्वाज नाम नहीं मिलते हैं। सम्भवतः महा जनपदों के युग में इन दोनों प्रदेशो को भी उत्तर पंचाल के अन्तर्गत या अधीन माना जाता था। इस अनुमान की पुष्टि शक्ति संगम तन्त्र में उल्लिखित एक प्राचीन परम्परा से भी है, जिसके अनुसार इन्द्रप्रस्थ से तीस योजन उत्तर की ओर अति सुन्दर पंचाल देश था। तैत्तिरीय आरण्यक के अनुसार कुरुक्षेत्र की उत्तरी सीमा पर तूर्न प्रदेश था, जिसकी पहचान उत्तराखण्ड के प्राचीन नगर शत्रुघन से हो सकती है। शतपथ ब्राहमण में पंचाल के परिचक्रानगर का उल्लेख है, जिसकी पहचान महाभारत एकाचक्रानगरी तथा उत्तराखण्ड के वर्तमान "चकरौता" नगर से कर सकते हैं।

विक्रम की तीसरी शताब्दी में कालसी के ठीक सामने यमुना के पार जगतराम ग्राम (जो कि वर्तमान में हरिपुर के नाम से प्रचलित है) में शीलवर्मन नामक नरेश ने अश्वमेघ यज्ञ किया था। उसकी यज्ञवेदी की ईटों पर इस प्रदेश का नाम युगशैल लिखा मिलता है। लगभग पचास वर्ष पूर्व देहरादून के अम्बाडी गांव में जहां सम्भवतः प्राचीनकाल में नाभागपुत्र अम्बरीष ने यमुनातट पर यज्ञ किया था। शिव भवनी नामक नरेश के अश्वमेघ के सम्बन्ध में एक अभिलेख मिला था यह ज्ञात नहीं हो पाया कि उस अभिलेख में इस प्रदेश का क्या नाम थाश लाखामण्डल प्रशस्ति से विदित होता है कि कुषाण साम्राज्य के अवसान पर जब उत्तराखण्ड के उत्तर पूर्व में कृर्तृपुराज्य की स्थापना हुई थी, तो लगभग उन्हीं दिनों उत्तराखण्ड के दक्षिण पश्चिम में सेनवर्मन नामक यादव नरेश ने एक नये राजवंश की स्थापना की थी, इस वंश के राज्य का नाम उक्त प्रशस्ति में सैंहपुर (लाखामण्डल) है। सम्भवतः जगतराम में अश्वमेध करने वाले शीलवर्मन और लाखामण्डल प्रशस्ति के सेनवर्मन को एक व्यक्ति मानना असंगत नहीं है। शीलवर्मन के समय युगशैल (कालसी) नाम से प्रसिद्ध राज्य सम्भवतः सातवें यादव नरेश सिंह वर्मन के समय से सैंहपुर कहलाने लगा। प्रशस्ति के अनुसार इस सिंह वर्मन ने अपनी भुजाओं के बल पर शौर्यवान और दानशील का यश प्राप्त किया तथा वह राजाओं में सिंह के समान था।

आर्य जाति से पूर्व भारत में खश जाति का भारत में प्रसार हो चुका था, इसलिए, खश जाति आर्य जाति से पहले लगभग एक सहस्त्र वर्ष उत्तर भारत में पहुंच चुकी थी। खश जाति या कस्सी जाति विक्रम पूर्व तीसरी सहस्त्राब्दी में जाग्रौसपर्वत माला पर फैल चुकी थी, इसकी कुछ टोलियां चिरकाल तक जाग्रौसपर्वतमाला और निकटवर्ती प्रदेश में छाई रही वहां से वे बेबिलोनिया के समृद्ध नगरों और गावों पर छापा मारती और लूटमार करती थी, निरन्तर कुछ टोलियां पूर्व की ओर बढ़ती हुई पश्चिम हिमालय, पंजाब कश्मीर, जौनसार, हिमाचल प्रदेश, गढ़वाल, कुमाऊ एवं नेपाल में फैल गयी।

खश जाति का प्रमुख देवता कश्शू था. जिसे वह अपनी जाति का अधिरक्षक मानती थी. अपने लम्बे इतिहास एवं विस्तृत प्रसार में इस जाति ने अनेक नये देवी–देवता को अपनाया और पुराने देवी, देवताओं को त्याग दिया, किन्तु अपने ईष्ट देवता को वह सदा व सर्वत्र पूजती रही, आज भी कश्मीर से लेकर जौनसार–बावर तक खश जाति इसे महासू के नाम से तथा चम्बा, कांगड़ा के गद्दी मणिमहेश के नाम से समस्त भारत के हिन्दू महेश्वर के नाम से पूजते हैं खश जाति को अपने जाति नाम कश से तथा अपने देववाचक शू शब्द से इतना प्रेम था कि हिमालय के विभिन्न भागों में सैकड़ों स्थानों के साथ खश या शू जुड़े मिलते हैं। बारहस्यूं आदि पट्टी परगनों में यही शू स्यू बन गया है।" हिमाचल, जौनपुर, जौनसार आदि में खश नारियां मायके में अधिक स्वतंत्र जीवन व्यतीत करती है, खश बालिकाओं के विवाह में माता–पिता जो कन्या शुल्क लेते है, उसका एक भाग मामादाम या मामझोली के नाम से बालिका के मामा को दिया जाता है। भानजे की वधू के लिए मामा अस्पृश्य होता है। प्रत्येक रवि के फसल के कटने के समय ग्रीष्मकाल में और खरीफ के सफल कटने के समय शीतकाल में पुत्रियों को मायके बुलाया जाता है। विवाह के अवसर पर तथा गर्भवती पुत्री को गाय, बकरियां एवं प्रसव होने पर अन्न और वस्त्राभूषण दिये जाते है। खश जाति में अदला–बदली (अट्टा–सट्टा) अर्थात साले को अपने बहन देकर साले की बहन से विवाह करने की सार्वभौम प्रथा भी समाज में प्रचलित थी। आज भी वे साले की पत्नी को बहन कहकर सम्बोधित करते हैं। खश जाति की नारियां ननद के पति को भाई और उसके पिता को चाचा (काका) कहती हैं। खश

जाति के लोग माता के भाई को और बुआ के पति को मामा कहते हैं।
उत्तराखण्ड में दास प्रथा का प्रचलन भी प्रचीनकाल से ही दृष्टिगोचर होता है। उत्तराखण्ड के धनवान व्यक्ति दास–दासियों को खरीद सकते थे, वसुदेव ने कुन्ती और माद्री की सेवा के लिए शतश्रृ पर दास–दासियां भेजी थी। खरीदे गये व्यक्ति का जीवन क्रेता के अधीन होता था। एकाचक्रानगरी के ब्राह्मण ने कहा था, यदि मेरे पास धन होता तो किसी व्यक्ति को खरीद कर अपने स्थान पर किसी अन्य को बकासुर के पास भेज देता।
जौनसार–बावर का सीमांकन
भौगोलिक पृष्ठभूमि –जौनसार–बावर के पूरब से यमुना नदी उत्तर में जनपद उत्तरकाशी व हिमाचल प्रदेश का कुछ क्षेत्र, पश्चिम में टौंस नदी व दक्षिण में जनपद देहरादून की तहसील है। जौनसार–बावर उत्तरी अक्षांश 30 डिग्री व 36 डिग्री के मध्य व पूर्वी देशान्तर 70 डिग्री एवं 78 डिग्री के मध्य स्थित है। इसके पूरब में यमुना नदी एवं इस क्षेत्र की एक मात्र खत "देवदार" टौंस नदी के उस पार हिमाचल प्रदेश से लगी हुई है। यह क्षेत्र प्राकृतिक सौन्दर्य की सम्पदा एवं सुदूर बीहड़ प्राचीन संस्कृति एवं भौगोलिक सम्पदा का भण्डार है। इसकी ऊँचाई 1650 फुट से 2000 फुट है। हरिपुर, कालसी लगभग 1450 फुट तथा सबसे दूरस्थ एवं ऊँचा डिब्बा (पर्वत) खडम्बा जहां पर देवदार के वृक्ष अपने अनुपम सौन्दर्य से इस क्षेत्र को जौनसार–बावर का स्विटजरलैण्ड कहा जाये तो अतिश्योक्ति नहीं होगा, इसकी ऊँचाई 8000 फुट है, जबकि उपखण्ड हेडक्वार्टर चकरौता लगभग 6500 फुट है। इस प्रकार सम्पूर्ण क्षेत्र का कुल क्षेत्रफल 100207 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है।' जौनसार–बावर प्राचीन काल से ही देवभूमि रही है, देवतात्मा हिमालय की गोद में बसा. प्राकृतिक सम्पदा प्राचीन संस्कृति व विशिष्ट सामाजिक रचना को अपने अन्दर समेटे हुऐ है। महाकवि कालिदास ने देवभूमि को देवताओं की आत्मा तथा पृथ्वी को नापने की विधि रचित मापदण्ड माना है। उन्होंने अपने महाकाव्य "कुमार सम्भव" में देवश्रभूमि के प्रति अपने ह्रदय की अभिव्यक्ति इस प्रकार प्रकट की है–

1. अस्तुत्तरस्यां दिशि देवतात्मा। हिमालयो नमाः नागाधिराजः।।
2. पूर्वेपरा तोय निधी न बगाह्य। स्थितः पृथ्वीव्या इव मानदण्डः।।

प्राकृतिक संरचना –जौनसार–बावर की भूतलीय आकृति व संरचना बहुत जटिल एवं विभिन्नतापूर्ण है। हिमालय की शीत वायु हिम एवं तेज बहती हवा झरनों एवं नदियों की कल–कल की सूर लहरिया चीरपुरातन संस्कृति, उबड़–खाबड़ जमीन को प्रारम्भ से लेकर आज भी इसे भूमि योग्य बनाये जाने का प्रयास किया जा रहा है। यह पर्वतीय भूमि बंजरपड़ी चट्टानों हिमाच्छादित पर्वत मालाएँ, नाना प्रकार की मिट्टियों एवं जंगलों से सृजित है। जौनसार–बावर के सजावट की विशेषतायें यह है कि ऊँची चौटियाँ, छोटे–छोटे झरने (गाड), यमुना नदी, टौंस नदी, पावर नदी आदि तथा पत्थरीली भूमि आदि।
प्राकृतिक संरचना की दृष्टि से इस क्षेत्र की भूमि को दो भागों में बांटा जा सकता है, जिसका मापदण्ड समुद्र तल से ऊँचाई से किया है–

1. समुद्र तल से 1500 फुट से 2200 फुट तक ऊँचाई का भू–भाग।
2. समुद तल से 2200 फुट से 5500 फुट तक ऊँचाई का भू–भाग।

जलवायु के दृष्टिकोण से इस क्षेत्र के 1500 ये 5500 फुट तक उष्ण जलवायु (आठ माह गर्म मौसम तथा नवम्बर से फरवरी तक ठण्डा मौसम) रहता है। रात को अधिकांशतः ओस (पाला) गिरती है, समशीतोष्ण जलवायु वाले क्षेत्र 5000 फीट से 7500 फीट तक ऊँचाई के क्षेत्र में गर्मी कम तथा सर्दी अधिक पड़ती है। हिमपात ऊँचाई वाले पर्वतों में दिसम्बर से लेकर मार्च, अप्रैल तक रहता है। सर्दियों में रात्रि के समय पाला पड़ता है। इससे कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में हिमपात मुख्यतः दिसम्बर और जनवरी के मध्य ही होता है, जो अधिकांश एक दो या अधिकतम पांच से आठ दिन के अन्दर समाप्त हो जाता है।
वर्षा– जौनसार–बावर में आस्मोस्टन के अनुसार वर्षा 50 इंच से 60 इंच के मध्य रहती है, जिससे सर्दियों में हिम के रूप में पड़ती है। सार्वधिक वर्षा माह जुलाई व अगस्त में पड़ती है। इस क्षेत्र के निवासी मुख्य रूप से तीन ही ऋतुएं मानते हैं – चौत, वैशाख, ज्येष्ठ, एवं आषाढ़ यह चार महीने मुख्यतः प्रथम ऋतु के अन्तर्गत है। द्वितीय सावन, भादो, असौज कार्तिक तथा अन्तिम मांगसीर, पौष, माघ, फाल्गुन।
ऐतिहासिक पृष्ठभूमि–देवभूमि उत्तराखण्ड के उत्तरी पश्चिम जिला देहरादून के पर्वतीय क्षेत्र है, इसके लिए शोध कार्य आवश्यक है, परन्तु क्षेत्र की पौराणिक कथाओं, गाथाओं, परम्पराओं एवं ब्रिटिश गजेटियर्स में इसकी ऐतिहासिक गाथाएँ समाहित हैं। स्कन्ध पुराण तक जौनसार–बावर क्षेत्र की चर्चा मिलती है। ग्यारवीं शताब्दी में अलबरूनी नामक अरबी विद्वान ने उत्तराखण्ड एवं इसके पश्चिमी भागों का भ्रमण किया तथा इसके इतिहास पर टिप्पणी भी की है। अतः इस क्षेत्र के इतिहास पर विस्तृत प्रकाश डालने के लिए पृथक ग्रन्थ की आवश्यकता है।
ऐतिहासिक तथ्यों के आधार चार प्रमुख पीढ़ियों का उल्लेख मिलता है–

1. पूर्व गोरखा काल (मुगल काल) 1168 से 1803 मुगलकाल ।
2. गोरखों का आक्रमण 1803 से 1815 गोरख काल।
3. अंग्रेजों का शासन (ब्रिटिश काल) 1815 से 1947 तक
4. आधुनिक काल 1947 ई० से अब तक।

प्रथम चरण तक यह जनजातीय क्षेत्र हिमाचल प्रदेश (पूर्व पंजाब) की सिरमोर रियासत का अंग था। फरवरी 1803 में गोरखों का कुमाऊ और गढ़वाल से आगमन आरम्भ हुआ जिसका नेतृत्व अमर सिंह थापा व हस्तीदल चौतरिया ने किया, लड़ते–लड़ते उन्होंने सिरमोर रियासत तथा जौनसार–बावर को भी अपने अधिपत्य में ले लिया। इसके फलस्वरूप सिरमोर रियासत को गोरखों के विरूद्ध अंग्रेजों की सहायता लेनी पड़ी और मेजर जनरल मार्टिन्डेल व मेजर लूडलों के नेतृत्व में अंग्रेजों ने नहान को गोरखों से मुक्त कराया। युद्ध के हरजाने के रूप में नहान की तत्कालीन महारानी गुलडेरी के जौनसार–बावर को तब तक अंग्रेजों के पास गिरवी रखा जब तक कि वह धन राशि वापस न लौटा दें। इस प्रकार काफी लम्बे समय अन्तराल तक अर्थात 1947 तक जौनसार–बावर पर अंग्रेजी शासन चलता रहा।
लोक कथाओं के कथानक के आधार पर जौनसार–बावर टिहरी गढ़वाल के पश्चिम में जमुना (यमुना) के पार होने के कारण यह क्षेत्र जमुना पार कहलाने लगा जो कालातर में जौनसार हो गया। उत्तर में पावर नदी होने के कारण इसका उत्तरी क्षेत्र बावर कहलाने लगा। कालांतर के अनुसार गंगा द्वार मध्य हिमालय तथा तमसा (टौंस नदी) से बौद्धांचल को केदार खण्ड और पूरव की ओर काली शारदा तक के क्षेत्र को मानस खण्ड बताया गया है।
हिमप्रान्तर की रमणीक गोद में बसा जौनसार–बावर देहरादून जिले की एक सब डिबिजन तहसील है यमुना तथा अमलाव नदी का संगम स्थल कालसी इस जनजाति क्षेत्र का सीमाकंन प्रारम्भ करता है और इसकी सीमाओं पर यमुना, टाँस, पावर व रिकनार्ड नदिया प्रवाहमान है। चकराता सबडिवीजन मुख्यालय है जहां पर एक सिविल सर्विस कार्यकारी का कार्यालय है। सम्पूर्ण क्षेत्र को 39 खतों एवं 357 गांवों में विभक्त किया गया है। तथा इसके

तीन ब्लॉक क्रमशः चकराता, कालसी एवं त्यूनी में विभक्त किया गया है। सन् 1953 ई० में उत्तर–प्रदेश पंचायत राज एक्ट तथा 1947 इस क्षेत्र में लागू हुआ और सम्पूर्ण क्षेत्र की ग्राम सभायें ग्राम पंचायते व न्याय पंचायते चुन ली गयी हैं। सबडिवीजन के सुचारू व्यवस्था हेतु जिला कार्यकारी (जिलाधिकारी) देहरादून के अधीन जिला विकास अधिकारी परगना अधिकारी, तहसीलदार, नायब तहसील दार, कानूनगो पटवारी, अमीनों के अतिरिक्त विभिन्न विभागों, विकास कार्य अधिकारियों का जनपद स्तर से लेकर क्षेत्रीय व ग्राम स्तर तक एक सो संगठित व्यवस्था के ढांचें में पिरोया गया है। इस क्षेत्र में वर्तमान में सुरक्षा व्यवस्था का कानूनी आधिकार पटवारी परगना अधिकारी के पास कुछ ही समय पूर्व चकरता, कालसी, सहिया त्यूनी, पुलिस चौकीयों की व्यवस्था की गयी है। अन्य राज्य की तरह उ०प्र० सरकार के द्वारा पंचायती राज एक्ट संशोधित नियमावली 1947 जारी कर दी गयी है, जिसके फलस्वरूप निम्न प्रकार के स्तरीय पंचायतों का गठन तथा 30 प्रतिशत महिलाये अनुसूचित जाति, जनजातियों आरक्षित पदों सहित कर दिया है।

राज्य के साथ ही मानव ने राजनीति का भी शुभारम्भ किया, इसलिए प्रत्येक क्षेत्र की अपनी एक राजनीतिक पृष्ठभूमि है, चूंकि मानव के सामाजिक जीवन को चलाने के लिए किसी न किसी प्रकार का शासन तंत्र आवश्यक है और शासन तंत्र के साथ ही राजनीति जुड़ी रहती है। जौनसार–बावर के राजनीति को हम चार कालों मं विभक्त कर सकते हैं–

जौनसार–बावर का सांस्कृतिक परिदृश्य

संस्कृति और सभ्यता इस युग के दो चर्चित विषय है। अवस्थाओं और मान्यताओं को संस्कृति और उसके अनुरूप व्यवहार तथा आचरण करने को सभ्यता कहते हैं। संसार में जितनी जातियाँ हैं, उनकी उतनी ही संस्कृतियां भी हैं। यदि भारतीय जीवन दर्शन का अध्ययन करें तो मानवीय संस्कृति केवल एक हो सकती है, दो नहीं। संस्कृति को यथार्थ स्वरूप देने के लिए अन्ततः धर्म और दर्शन की शरण में जाना ही पड़ेगा। संस्कृति का अर्थ है, मनुष्य का भीतरी विकास व्यक्ति के निजी चरित्र और दूसरों के साथ किये जाने वाले व्यवहार तथा दूसरों के व्यवहार को ठीक समझ सकने की योग्यता संस्कृति की देन है। अंग्रेजी में संस्कृति का अर्थ बोधक शब्द है. कल्चर, जिसका तात्पर्य है– सभ्यता, रहन–सहन एवं खान–पान, सोचने–विचार करने का तरीका। अपने नाम, धन रूप, परिवार क्षेत्र भाषा आदि की तरह अपने रहन–सहन, रीति–रिवाज, व्यवहार व जीवन यापन के लिए सर्वसम्मत जीवन पद्धति का निर्माण करना और उसे उन्हीं के अनुरूप संस्कार से सँवार कर उसका विकास करना ही संस्कृति है।

इस अर्थ में जौनसार–बावर की लोक संस्कृति अपना स्वरूप निर्धारण करने में सक्षम है। वहाँ का भौगोलिक एवं सामाजिक परिवेश लोक संस्कृति के स्वरूप के निर्धारक मानक हैं। इतिहास सम्मत मत के अनुसार जौनसार–बावर के लोग आर्य जाति के वंशज है, जो भारत के मूल निवासी होने के साथ–साथ यहां अपनी मौलिक सांस्कृतिक पहचान व सामाजिक मान्यताओं के लिए विख्यात है।

जौनसारी लोक संस्कृति हिमालयी लोक संस्कृति का हिमकिरीट है, जो अपने नैसर्गिक, भौगोलिक, वैविध्य के बीच भी अपनी मौलिकता व पहचान को अक्षुण बनाये रखने में सक्षम सिद्ध हुई है। यद्यपि अब दुनिया में कोई नस्ल ऐसी नहीं बची है, जो पूरी तरह रक्तशुद्धि का दावा कर सके। जातियों के बीच प्रत्यक्ष–परोक्ष रूप में बेटी व्यवहार चलते रहे और नस्लों को मूल रूप में आश्चर्यजनक परिवर्तन होते रहते हैं। फिर भी जौनसारी लोग स्वभाव से ही अपनी मूलकृति को यथावत रखने में सफल हुए है, उनके बीज–वंश अन्य जातियों की अपेक्षा कम परिवर्तन हुए हैं। सभ्यता के विकास के साथ–साथ समाजों के आपसी आदान–प्रदान का भी संस्कृति पर प्रभाव पड़ा है। परिवर्तन के दौर में भी अपनी श्रेष्ठता और मौलिकता को बचाए रखने का प्रमाण जौनसार–बावर की संस्कृति में विद्यमान है।

यहां आज भी प्रायः कृषि, पशुपालन, चिकित्सा, पूजा–पाठ शिल्प उद्योग के साथ–साथ जीवन यापन की पद्धति विशुद्ध जौनसारी है। परिवर्तन सर्वथा प्रगति का सूचक होता है। जब परिवर्तन से समाज को मूल स्वरूप को ओझल कर देता है। हमारी संस्कृति में परिवर्तन को अपने परिवेश में रहकर स्वीकार करने की अनुमति ही दी है। सौन्दर्योपासना संस्कृति का दिव्यगुण हैं। कुल देवता महासू की उपासना और उसी को अपनी जीवन का सर्वस्व मानने वाले जौनसारी स्वभाव से ही सत्य और धर्म के अनुसार–चलने के आदि हैं। उनके स्वभाव में भोलापन, निश्छलता और उनकी शान्त मुद्रा सौन्दर्योपासना की परिचायिका हैं। संस्कृति संरचना की जननी है। इसलिए जौनसार–बावर के लोगों का संस्कार संस्कृति ने अपनी तूलिका से संवार कर संस्कार सम्पन्न कर दिया है। संस्कार सम्पन्न संस्कृति की वह कृति कार्य पद्धति है जो यहां के हर व्यक्ति के साँस की लय की तरह प्रवाहमान हैं। धर्म और सभ्यता के समन्वय में यहां के लोगों को आत्म साक्षात्कार के लिए प्रस्तुत करती है।

जौनसार–बावर संस्कृति विशुद्ध पहाड़ी संस्कृति है, जिस प्रकार हिमालय की शुद्ध हवा नदी, झील, झरनों का शुद्ध जल. शुद्ध घी अन्न व दूसरी वस्तुएँ अपनी पवित्रता के लिए विख्यात है। जौनसारी संस्कृति भी अपनी पवित्रता के लिए एक अनूठा उदाहरण है। इसलिए किसी भी क्षेत्र की संस्कृति से तात्पर्य है कि उस क्षेत्र के निवासियों को रहन–सहन, भाषा बोली, रीति–रिवाज परम्पराएँ, खानपान एवं सामाजिक मान्यताएँ आदि।

संस्कृति वह जटिल सम्पूर्ण व्यवस्था है, जिसमें समस्त ज्ञान, विश्वास कला, नैतिकता के सिद्धान्त, विधि विधान, प्रथाएँ एवं अन्य समस्त योजनाएँ सम्मिलित हैं, जिन्हें व्यक्ति समाज का सदस्य का सदस्य होने के नाते प्राप्त करता है। संस्कृति को सामाजिक विरासत माना जाता है। संस्कृति पैतृकता से प्राप्त नहीं होती, अपितु सीखा हुआ व्यवहार है, जो मनुष्य समाज का सदस्य होने के नाते ही सीख लेता है। इसलिए समाज को संस्कृति का दर्पण भी कहा जाता है। संस्कृतिपूर्ण सामाजिक परम्परा है। जौनसार–बावर की संस्कृति का वर्गीकरण पाँच भागों में किया जा सकता है–

भाषा (बोली)– सामाजिक जीवन में लोक संस्कृति के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता है। संसार का प्रत्येक साहित्य और साहित्य से सम्बन्धित भाषा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से लोक संस्कृति में प्रभावित है। सृष्टि के प्रारम्भ से ही जब मनुष्य की विकास यात्रा का श्री गणेश हुआ भाषा उसका मुख्य अवयव एवं सर्वसुलभ माध्यम रहा है, चूँकि अपनी भावाभिव्यक्ति के लिए मनुष्य को भाषाश्रित होना ही पड़ता है। भाषा के बिना उसकी व समाज की विकास गाथा ने केवल अकथ रह जाती है। अपितु यह गूँगापन उसे अपनी बात समझाने एवं समझने तथा दूसरे से कहने की बात ग्रहण करने में एक बहुत बड़ी बाधा उत्पन्न कर देता है। भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है। यहाँ अनेक भाषाएँ, बोलियाँ बोली जाती हैं। बोली भाषा के इन विविध नानस्वरूपों में उत्तराखण्ड के अंचल विशेष में अपनी समृद्ध और मौलिक संस्कृति की अनमोल विरासत के लिए प्रसिद्ध हैं, परन्तु अपनी अलग संस्कृति पहचान के लिए सम्पूर्ण राष्ट्र में विख्यात हैं। यह क्षेत्र जौनसार–बावर है। भाषा हमारे सम्पूर्ण विकास यात्रा को अभिव्यक्ति देती है और जन–जन तक पहुँचती है। देश, जाति की और उस समाज की वास्तविक पहचान उसके साहित्य कला एवं संस्कृति से होती है। उस समाज का क्रमिक विकास साहित्य एवं कला के साथ ही होता है। इन सबके लिए भाषा का आश्रय लेना पड़ता है।

जौनसार–बावर की अपनी एक भाषा (बोली) है, जिसे स्थानीय भाषा में जौनसारी एंव बावरी कहा जाता है। यद्यपि जौनसार–बावर की अपनी एक प्राचीन लिपि है जो कतिपय कारणों से व्यवहार में नहीं आ पायी। ब्राह्मणों एवं पॉबचो के ग्रन्थों में ही कैद होकर रह गयी। यदि इस लिपि का विकास एव प्रचलन बढ़ाया जाता तो वर्तनी एवं उच्चारण के समस्या का हल मिल चुका होता और जौनसारी भाषा का सही उच्चारण के साथ प्रचार एवं प्रसार हुआ होता। जौनसार के लोगों की भाषा जौनसारी तथा बावर के लोगों की भाषा बावरी कहलाती है, लेकिन आजकल व्यवहार में प्रयुक्त लिपि देवनागरी ही है।

रीति–रिवाज तथा पौराणिक परम्परायें–किसी क्षेत्र या प्रदेश की परम्पराओं का अभिप्राय, उस क्षेत्र की संस्कृति, भाषा, वेश–भूषा, रीति–रिवाज तथा विवाह संस्कारों की पद्धति आदि से होता है। जौनसार–बावर के लोग हिन्दू धर्म के मतावलम्बी हैं, तथापि मूल रूप से जनजाति होने के कारण इनके अपने रीति–रिवाज, भाषा, देवी–देवता हैं। हिमाचल प्रदेश से जुड़ा क्षेत्र सदियों से अपनी परम्परागत सभ्यता एवं संस्कृति को संजोये हुए जीवन यापन करता चला आ रहा है। महाभारत की समकालीन संस्कृति एवं सभ्यता यहाँ मुगलकाल से अपनी परम्परागत सभ्यता एवं संस्कृति को संजोये हुए जीवन यापन करता चला आ रहा है। महाभारत की समकालीन संस्कृति एंव सभ्यता यहाँ मुगलकाल से पूर्व ही मौजूद थी। नागाधिराज हिमालय की उपत्यका में रचा–बसा जौनसार–बावर अपने नैसर्गिक सौन्दर्य, मौलिक संस्कृति और विशिष्ट सामाजिक, धार्मिक पारम्परिक पहचान के लिये प्रसिद्ध है। महाभारत काल से जुड़ा यह क्षेत्र पांडवों की कर्मभूमि रहा है। यहाँ के लोग स्वयं को पांडवों का वंशज मानते हैं। महासू देवता यहाँ का आराध्य देव है तथा शैव व वैष्णव मतों का यद्यपि समान रूप से आदर होता है. फिर भी शैव मत का प्रबल प्रभाव सर्वत्र दृ ष्टिगोचर होता है।

जौनसार–बावर के परिवेश में ऐतिहासिक तथ्यों और पौराणिक मान्यताओं को उद्‌घाटित करने की आवश्यकता है। इतिहास साक्षी है कि यह दुर्गम पिछड़ा पहाड़ी क्षेत्र आदि काल से राष्ट्र की मुख्यधारा से सर्वकालिक सम्बन्ध जोड़कर सदैव कसौटी पर खरा उतरा है। कुछ समाज तथा मानव शास्त्र के अनुभवों व शोधकर्ताओं ने इस क्षेत्र में प्रचलित बहुपति व बहुपत्नी प्रथाओं को आवश्यकता से अधिक उछालने का अतिश्योक्तिपूर्ण प्रयास किया तथा इसके गुण–दोषों के ज्ञान के भौगोलिक ज्ञान के अभाव में तथा आर्थिक सामाजिक बनावट का विश्लेषण किये बिना किसी भी प्रथा की वर्णनात्मकता यहाँ की जीवनशैली के प्रति न्यायपूर्ण सिद्ध नहीं हो सकती। इस विषय में गहन अध्ययन करने के पश्चात् विश्लेषण करना आवश्यक है। यह देवात्मा हिमालय की गोद में बसा, प्राकृतिक सम्पदा, प्राचीन संस्कृति व विशिष्ट सामाजिक रचना को अपनी अन्दर समेटे हुए अपना यह सुदूर क्षेत्र जौनसार–बावर है, जिसमें कि अभी तक के शोध कार्य अपूर्ण ही नहीं तथापि सत्यता व मौलिकता से दूर है। इसी कारणवश लेखक यहाँ का वाशिंदा (मूल निवासी) होने का गौरवान्वित होकर तथ्यों को जन समुदाय के समक्ष वर्णन करने का प्रयास कर रहा है।

रहन–सहन– आर्थिक दृष्टि से प्रत्येक जनसाधारण समान तथा स्वावलम्बी है। भरपेट खाने–पीने के लिए रोजी–रोटी सभी कमा लेते हैं। समाज में विषमता कम ही दृष्टिगोचर होती है। सभी प्राकृतिक संसाधनों का उपभोग करते हैं। खून–पसीने की कमाई से लोग सन्तुष्ट रहते हैं। आर्थिक स्रोत मात्र कृषि एवं पुशपालन ही है। खेतिहार जीवनचर्या एवं कष्टमय जीवन यापन करते हुए सुखी एवं साधारण जीवन यापन करते हैं। श्वसुधैव कुटुम्बकम् की संस्कृति की झलक यहाँ के जीवन में सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। रहन–सहन यहाँ के संसाधनों पर पूर्णतः आश्रित है। स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति इन्हीं साधनों से होती है। यहाँ का खान–पान साधारण है, खाद्य पदार्थों में मुख्यतः गेंहूँ मक्का, कौदा आदि की रोटी एवं चावल (जिसे स्थानीय बोली में भात कहा जाता है), कावणी, सतु, लेमडो, छैणी, झगोरा आदि भोज्य पदार्थ ग्रहण करते हैं, तथा साग–सब्जियों में मटर, कद्दू काखड़ा, लौकी, करेला, तोरी बैंगन, हरी सब्जियों में मूली, पालक, गाजर आलू, प्याज भिण्डी आदि एवं दालों में प्रमुखतः राजमा यह तीन प्रकार की होती है। लाल, सफेद तथा काली, सोयाबीन, बरट, कुलथी, मास, मसूर मूंग, सूटें आदि प्रमुख है।

इस प्रकार जौनसर–बावर में शाकाहारी एंव मांसाहारी दोनों प्रकार के खाद्य पदार्थों का प्रचलन है मूलरूप से यहाँ के लोग सादा भोजन दाल, सब्जी रोटी चावल का उपभोग करते हैं। यहाँ का रहन–सहन काफी सादा है। जौनसार–बावर के लोग ईमानदार एंव परिश्रमी होते हैं।

मेले एवं महोत्सव–देवभूमि जौनसार–बावर में आदि काल से ही एक जैसे धार्मिक त्यौहार, मेलों को मनाने की प्रथा आज भी सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। आधुनिककाल में जैसे–जैसे यहाँ शिक्षा का प्रसार हुआ वैसे–वैसे महोत्सव मनाने की परम्परा का भी प्रादुभाव हुआ है। महोत्सव एक ऐसा प्रयास है, जिसमें हम अपनी पौराणिकता लुप्त होती जा रही है। संस्कृति की पुर्नजीवित किया जा सकता है, तथा सामाजिक एंव सांस्कृतिक जनजागरण का आभास होता है। सम्पूर्ण जौनसार–बावर में मेले एंव त्योहारों को भिन्न–भिन्न गाँवों में भिन्न–भिन्न रूपों में मनाया जाता है, लेकिन सामूहिक रूप से मनाये जाने वाले मेले एंव त्यौहारों में प्रत्येक जाति एंव वर्ग के नर–नारी गाँव के पंचायती आँगन या देवता की प्रांगण में ढोल दमाउणी एवं रणसिगें तथा अन्य वाद्य यंत्रों के स्वर एकजुट होकर सामूहिक नृत्य एवं गीत गाकर जौनसारी संस्कृति की एकता के परिचायक हैं। देवभूमि का श्रेय प्राप्त जौनसार–बावर प्राचीन धार्मिक त्यौहार व मेलों के लिए सम्मिलित है। यहाँ के महोत्सव एक ऐसा प्रयास है, जिससे सामाजिक व सांस्कृतिक जनजागरण की मूलक का आभास होता है। यह परगने के सभी भागों से बिल्कुल भिन्न अपनी पहचान व अनूठी संस्कृति का जामा पहने हुए हैं। त्यौहार व मेले भिन्न हैं, सामूहिक रूप में मनाये जाने वाले इन मेलों, त्यौहारों में जहाँ हर जाति के नर–नारी गाँव के पंचायती आँगन में ढोल, दमाके व रणसिगें वाद्य यंत्रों के स्वर एकजुट होकर सामूहिक नृत्य एवं गीत गाते हैं, कहीं एक–दूसरे को अपने घरों में ले जाकर भोजन कराते हैं और एकता व भाई चारे का प्रदर्शन करते हैं।

जौनसार–बावर के देवभूमि में अनेक त्यौहार एवं मेलों को मनाने की प्रथाएँ हैं. लेकिन सामूहिक रूप से मनाये जाने वाले त्यौहार निम्नलिखित हैं–

1. बिस्सू
2. दिवाली (देयाई)
3. शहीद केसरी चंद का मेला
4. जागड़ा
5. पाँचों के मेले
6. मअण आदि।
7. नुणाई
8. माघ त्यौहार

1. बिस्सू बैसाखी से चार दिन तक बिस्सू का त्यौहार मनाया जाता है। 13 अप्रैल से 16 अप्रैल तक के इस पर्व में सब लोग अपने मकानों व गौशालाओं की पुताई सफेद मिट्टी (कमेडा) से कर, स्वागत करते हैं। पहले दिन सुबह पौराणिक हथियारों (तलवारों, ढांगरा, धनुष–बाण) को साफ कर तैयार करते हैं। पुरुष आँगन में एकत्र बुरांस के फूलों को जगंल से लाकर

लकड़ियों के मध्य सजाकर देवी–देवताओं को गाते बजाते भेट करते हैं, फिर कुछ फलों को साथ लाकर अपने घरों में लगाते हैं। स्त्री–पुरूष आँगन में अलग–अलग देवांगनाओं की कृतियों का गान गाकर करते हैं। घरों में खास चावल के व्यंजन बनाये जाते हैं। खासकर (कचोडियाँ) व शाकूलिया आदि मुख्य होते हैं। यह त्यौहार जौनसार–बावर के प्रत्येक गाँव व खेतों में मनाया जाता है। इसमें लोक नृत्यों व गीतों के अतिरिक्त धनुष–बाण का प्रदर्शन, मुख्य आकर्षण का केन्द्र रहता है। कौरव व पांडवों की परम्पराओं के आधार पर अस्त्र–शस्त्र व तीर कमान को तैयार करना तथा अभ्यास करना योद्धाओं की प्रतिष्ठा को प्रमुखता देना होता है

2. जागडा– यह मुख्य रूप से क्षेत्र के धार्मिक पर्व श्री महासू देवता की आराधना के लिए मनाया जाता है। भादो के महीने महासू की मूर्ति को स्नान कराया जाता है और बकरे की बलि देकर मांस व भोजन आगंतुकों को खिलाया जाता है। रात्रि जागरण में देवता के लोकगीत गाकर स्तुति करते हैं। वीरता का प्रमाण इस पर्व में खासकर देवस्थल–हनोल (बाबर) में होता है, जहाँ पर गने के हर व्यक्ति गाँव पहुँच कर महासू देवता की स्तुति में टॉस नदी में सुबह स्नान कर देवता डोली (डोरिया) को मन्दिर के अन्दर से बाहर लाने के लिए बल का प्रयोग कर अपनी और खत की प्रतिष्ठा रखने के लिए संघर्ष करता है। यह त्यौहार अपने आप में अनूठा है और हनोल महासू देवता के मन्दिर के अलावा प्रत्येक देवस्थल पर मनाया जाता है। इस उत्सव के परिवेश में सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक और पौराणिक सत्र विद्यमान है। हनोल के अतिरिक्त जौनसार में "बिसोई" खाटवा, गबैला, थैना और लखवाड में भी महासू देवता के आगमन दिवस के रूप में धूमधाम से मनाया जाता है।

3. "नुणाई यह पर्व सावन माह में कई गाँव व खेतों के निकट मेले के रूप में मनाया जाता है। क्षेत्र में भेड़ पालन वाले इलाकों में इसकोम विशेष रूप से मनाते हैं। क्षेत्र में भेड़ पालन वाले इलाकों में इसको विशेष रूप से मनाते है। जब बड़े पर्वतों से पाँच महीने के पश्चात भेड़ों को ऊँची–घाटियों एवं पर्वतों से नीचे लाकर ऊन निकालने का समय आ जाता है तो प्रथा के साथ पाँच माह से बाहर पर्वतों के जगलों में भेडों के साथ कष्ट उठाने वाले चारवाहे घर पहुँचते हैं, तो उनको गाँवों में सम्मान के साथ बारी–बारी से न्योता मिलता है और नाच–गाने के साथ गाँव वाले इन्हें अपने घर में मेहमान बनाकर स्वागत करते हैं. और इसके कुछ ही दिनों बाद नुणाई का मेला लगता है। जहाँ खत के सभी लोग एकत्र होकर गीत व नाच के साथ खुशियाँ मनाते है। सगे–सम्बन्धी आपसी मूल व प्रेम भाव का आदान–प्रदान करते हैं। मीठे आटे की मोटी–मोटी रोटी (रोट) बनाकर मेले में एकत्र कर भेड़ों व चरवाहे के कुशलपूर्वक वापस घरों में आने की खुशी में रम्म के साथ काट कर सबको प्रसाद के रूप में बाँटा जाता है। शाम को नजदीक गाँव के लोग दूर से आये हुए मेहमानों को अपने घर बुलाकर आदर–सत्कार करते हैं और भेड़ों की ऊन निकालने का काम आरम्भ कर देते हैं।

दिवाली (दियाई)– इस क्षेत्र में दिवाली मुख्य त्यौहारों के रूप में मनाई जाती है। यह दिवाली देश में मनाई जाने वाली दिवाली से ठीक एक माह बाद मनाई जाती है। इसका पौराणिक मत के अनुसार लोगों का मत है कि यहाँ अयोध्या से दूर होने के कारण भगवान रामचन्द्र के राज्याभिषेक का समाचार एक माह बाद पहुँचा, परन्तु इस त्यौहार के मनाने का कारण खास कर फसल की कटाई और बुआई जोकि कार्तिक माह में होती है और लोग कृषि के कार्य में व्यस्त रहते हैं, इसलिए एक माह बाद मंगसीर माह में मनाते हैं। आमावस्या की रात्रि को गाँव के सभी नर–नारी आँगन में आकर होला लकडी का पुंज जला कर पाँडवों तथा महासू देवता के गीत गाते हैं। पुरूष लोग होला लेकर निकट किसी खेत में जाकर गायको (लोकल गान का बखान) करते हैं। दूसरे दिन गाँव के पुरुष गेंहूँ जौ की उगाई गई हरियाली लेकर आँगन में उतरते हैं और सर्वप्रथम कुल देवता के मन्दिर में चढ़ाते हैं। इसके बाद गाँव के मुखिया स्याणा के कान पर हरियाली लगाकर फिर हर नर–नारी को हरियाली अर्पित करते हैं, और आँगन में हरियाली पर गीत गाते हैं। इस दिवस को भिरूढ़ी कहते हैं, प्रातः आपसी वैमनस्य को भुलाकर अखरोट तथा चिवड़े (चावल उबले व कुटे हुए) के साथ गले से गले मिलकर आदान–प्रदान होता है। आपसी मतभेद भुला दिये जाते हैं। सात दिनों के इस पर्व के अन्तिम दो दिनों में हिरण, हाथी बनाकर नचाया जाता है। अच्छे–अच्छे व्यंजन बनाकर एक दूसरों को घरों में बुलाकर सम्मान किया जाता है।

गीतों के व्याख्यान से यह भी विदित होता है कि पूर्व कुटुम्ब में मुनष्य का दूध पीता था, जिससे बच्चे भूखे ही मर जाते थे। इस व्यथा के परिवेश में देवलाड़ी में महासू देवता ने अवतार धारक किया, जिससे दानव का विनाश हुआ तथा खुशी में दिवाली मनाई गई।

5. पाँचों के मेले– यह दशहरे के अवसर पर अनिश्चित शुक्ल पक्ष या सप्तमी तिथि को मनाते हैं। इस दिन मेला भी लगता है, अष्टमी को घर के मुखिया व्रत रखते हैं और सामूहित रूप से बकरा काटकर त्यौहार मनाते हैं। लाखामण्डल और उद्घामल्टा व कुणागाँव में तो बस साल पूर्व भैंसों की बलि देकर दशमी का त्यौहार मनाया जाता था, परन्तु अब व मात्र मेटो के रूप में ही मनाया जाता है।

6. माघ त्यौहार– क्षेत्र में पूरे एक माह तक चलने वाले इस पर्व को पौष माह की संक्राति से दो दिन पूर्व गाँववासी अपने पाले हुए बकरे को पंचायती आँगन में लाते हैं, मानो यह दिखाते हैं कि सबसे मोटा बकरा किसका है? फिर एक–दूसरे का बकरा काटकर घरों में ले जाकर साफ करके रस्सियों में टांग देते हैं और फिर अपने घरों में बुला–बुलाकर सामूहिक भोजन, गान व नृत्य करते हैं। रात को भोजन की व्यवस्था कर नृत्य गाने से खुशियों व प्रेम भाव जागृत करते हैं। इस पर्व में प्रत्येक रिश्तेदार के घर बेटी, बहिन आदि का हिस्सा लेकर जाते हैं, परन्तु आज के परिवेश में यह पर्व छोड़ने का प्रयास किया जा रहा है।

7. वीर केसरी चंद का मेला भला ऐसा कौन जौनसारी होगा कि वीर केसरी के से परिचित न हो, स्वतंत्रता संग्राम में इस युवक ने मात्र 18 वर्ष की आयु में अपने प्राणों की बलि देकर भारत को स्वतंत्रता दिलाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इसलिए यह क्षेत्र मात्र, अपने ही क्षेत्र विशेष तक सीमित नहीं, अपितु जब–जब राष्ट्र को केसरी जैसी वीरों की आवश्यकता पड़ी है तब–तब इस क्षेत्र की माटी ने अनेक वीरों को जन्म दिया है, इन्हीं की स्मृति में प्रत्येक वर्ष 3 मई को इन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए इस मेले को आयोजन किया जाता है।

8. मौंअण मेला– इस मेले के अवसर पर जौनसार–बावर के भिन्न–भिन्न परगनों के भिन्न–भिन्न नदियों में मनाने की प्रथा है। यह त्यौहार विशेषतः मछली पकड़ने का त्यौहार है। पहले तो इस मेले का आनन्द स्त्रियों एवं बालिकाएँ एवं छोटे बच्चे इत्यादि सभी लेते थे, लेकिन वर्तमान में केवल पुरूष वर्ग ही अब इस मेले का आनन्द लेते हैं। पहले इस मेले में लड़ाई–झगड़ों की प्रथा भी प्रचलित थी, लेकिन वर्तमान में शिक्षा के प्रसार से अब इस त्यौहार को बड़े शान्तिपूर्ण एवं मनोरंजन ढंग से मनाया जाता है।

निष्कर्ष–

उपरोक्त शोध के पश्चात यह स्पष्ट हो जाता है कि जौनसार बावर का क्षेत्र सांस्कृतिक व ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है इस शोध में जौनसार बावर संस्कृति की विलक्षणता एवं ऐतिहासिकता को दृष्टिगत रखते हुए पलायन के कारण इस संस्कृति का संरक्षण एवं संबर्धन आवश्यक है तथा जौनसारी बावरी संस्कृति का प्रचार प्रसार एवं जीवित रखना आवश्यक है द्य वर्त्तमान समय तक जौनसारी–बावरी संस्कृति व इतिहास पर अल्प मात्र में शोध किया गया है अतः जौनसारी बावरी संस्कृति व इतिहास लिपिबद्ध करना नितांत आवश्यक है द्य जिससे आगामी पीढ़ी को जौनसारी–बावरी संस्कृति और इतिहास को जानने में मदद मिलेगी तथा शोध के क्षेत्र में आगामी शोधार्थियों को जौनसारी–बावरी संस्कृति और इतिहास पर शोध करने के लिए प्रेरित करेगी

सन्दर्भ सूची

1. उत्तराखण्ड का इतिहास शिव–प्रसाद डबराल खण्ड 2. पृष्ठ संख्या 93 आयुर्वेद पृष्ठ संख्या 4–9:20
2. उत्तरांचल का इतिहास शिव प्रसाद डबराल भाग–1 पृष्ठ संख्या 99 अथर्वेद पृष्ठ संख्या 4–9–104
3. उत्तराखण्ड का इतिहास–शिवप्रसाद डबराल भाग 1 पृष्ठ संख्या 90
4. पवन पर्व अ०पृष्ठ सं 176 उत्तराखण्ड का इतिहास शिवप्रसाद डबराल भाग १ पृष्ठ संख्या 96
5. उत्तराखण्ड का इतिहास–शिवप्रसाद डबराल भाग 1 पृष्ठ संख्या 98/99
6. उत्तराखण्ड का इतिहास शिवप्रसाद डबराल भाग 1 पृष्ठ संख्या 985
7. उत्तराखण्ड का इतिहास–शिवप्रसाद डबराल भाग 1 पृष्ठ संख्या 90
8. पवन पर्व अ०पृष्ठ सं 176 उत्तराखण्ड का इतिहास शिवप्रसाद डबराल भाग 1 पृष्ठ संख्या 96
9. उत्तराखण्ड का इतिहास–शिवप्रसाद डबराल भाग 1 पृष्ठ संख्या 98
99
10. उत्तराखण्ड का इतिहास–शिवप्रसाद डबराल भाग 1 पृष्ठ संख्या 986
11. उत्तराखण्ड का इतिहास–शिवप्रसाद डबराल भाग 1 पृष्ठ संख्या 99
12. उत्तराखण्ड का इतिहास–शिवप्रसाद डबराल भाग 1 पृष्ठ संख्या 202
13. उत्तराखण्ड का इतिहास शिवप्रसाद डबराल भाग 1 पृष्ठ संख्या 2067
14. उत्तराखण्ड का इतिहास–शिवप्रसाद डबराल भाग 1 पृष्ठ संख्या 210
15. उत्तराखण्ड का इतिहास–शिवप्रसाद डबराल भाग 1 पृष्ठ संख्या 55
16. जौनसार–बावर दर्शन डी०आई ०जी० जयपाल सिंह राणा पृष्ठ संख्या 509
17. जौनसार–बावर दर्शन डी०आई ०जी० जयपाल सिंह राणा पृष्ठ संख्या 6010
18. जौनसार–बावर दर्शन डी०आई०जी० जयपाल सिंह राणा पृष्ठ संख्या 4. जौनसार–बावर दर्शन डी०आई०जी० जयपाल सिंह राणा पृष्ठ संख्या 1 111
19. जौनसार–बावर दर्शन डी०आई०जी० जयपाल सिंह राणा पृष्ठ संख्या 66
20. जौनसार–बावर दर्शन डी०आई०जी० जयपाल सिंह राणा
21. जौनसार–बावर दर्शन डी०आई०जी० जयपाल सिंह राणा पृष्ठ
22. जौनसार–बावर दर्शन डी०आई०जी० जयपाल सिंह राणा पृष्ठ संख्या 220
23. जौनसार–बावर दर्शन डी०आई०जी० जयपाल सिंह राणा पृष्ठ 220